Shodh Sanchay

Shree Naroda Kelavani Mandal Sanchalit
SMT. A.P. PATEL ARTS & LATE SHREE N.P. PATEL COMMERCE COLLEGE
Shree Prahladbhai Kashidas Patel Vidhya Sankul, Naroda, Ahmedabad-382330.
Reaccredited by NAAC with B Grade Third Cycle | Accredited - by 'AAA'= 4 Star
Phone : 079-22816582, M.: 8866388134 E-mail : narodacollage1993@yahoo.com

Volume - 1

अभिराजराजेन्द्रमिश्र कृत 'अभिराजयशोभूषणम्' के 'परिचयोन्मेष' का समीक्षात्मक अध्ययन

डॉ. हेमा एल.सोलंकी
एसोसिएट प्रोफेसर
अध्यक्षा, संस्कृत विभाग
एन.एस.पटेल आर्ट्स कॉलेज (ओटोनोमस), आणंद, गुजरात.
मो.नं. -9727778418
hemasolanki46@yahoo.com

समस्त भारतीय विद्याओं के मूल ऐसे वेद से ही संस्कृत काव्य एवं काव्यशास्त्र की उत्पत्ति मानी गई है। प्राचीन एवं अर्वाचीन अनेक काव्यशास्त्रीओने एवं इस क्षेत्र से जुड़े विद्वानो ने ईस बात का समर्थन भी किया है। अनेक वर्षों से इस संस्कृत काव्यशास्त्र की विकासयात्रा का निर्देश करने वाले ग्रन्थों का निर्माण हुआ है। जिनमें नाट्यशास्त्र, ध्वन्यालोक जैसे आकर ग्रन्थ, अभिनवगुप्त की अभिनवभारती, ध्वन्यालोकलोचन जैसे भाष्य अथवा टीका ग्रन्थ, महिमभट्ट के व्यक्तिविवेक जैसे वाद ग्रन्थ, मुकुलभट्ट के अभिधावृत्तिमातृका, रुय्यक के अलंकारसर्वस्व जैसे प्रकरण ग्रन्थ तथा मम्मट के काव्यप्रकाश, विश्वनाथ के साहित्यदर्पण आदी संग्रहग्रन्थ समाविष्ट है।[1]

संस्कृत काव्यशास्त्र के विकास, विस्तार एवं उत्क्रान्ति के इतिहास के परीक्षण हेतु इस परम्परा को विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न चार युगों में विभक्त किया है। 'भारतीय साहित्य विचार मंजूषा' नामक ग्रन्थ में इस युग का विभाजन निम्न लिखित रूप में किया गया है।[2]

१) आनन्दवर्धन के पुरोगामीयों का युग
२) आनन्दवर्धन और अभिनवगुप्त का युग
३) मम्मटाचार्य युग
४) मम्मटोत्तर युग

इसी परम्परा में संस्कृत का 'अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशास्त्र' लिखते हुए श्री अभिराजराजेन्द्र मिश्रने काव्यशास्त्र की वैदिक पृष्ठभूमि का स्वीकार कर काव्यशास्त्र के विभिन्न अंगो का विकास आचार्य भरत के नाट्यशास्त्र से मानकर इसे चार विभिन्न काल खण्डों में विभाजित किया है।[3] जैसे कि,

१) पूर्व भरत-युग
२) भरत युग
३) भरतोत्तर युग (पण्डितराजजगन्नाथान्त) तथा

---

[1] संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्यपरम्परा – डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी पृष्ठ १४

Shodh Sanchay
Shree Naroda Kelavani Mandal Sanchalit
SMT. A.P. PATEL ARTS & LATE SHREE N.P. PATEL COMMERCE COLLEGE
Shree Prahladbhai Kashidas Patel Vidhya Sankul, Naroda, Ahmedabad-382330.
Reaccredited by NAAC with B Grade Third Cycle | Accredited - by 'AAA'= ⭐⭐⭐⭐ 4 Star
Phone : 079-22816582, M.: 8866388134 E-mail : narodacollage1993@yahoo.com

४) पण्डितराजोत्तर- युग

अभिराजराजेन्द्रमिश्रने अपने ग्रन्थ में पण्डितराजोत्तर- युग में (१६८०-२००७) संस्कृत काव्यशास्त्र की विकास परम्परा की समीक्षा कि है। काव्यशास्त्र की अनवच्छिन्न धारा को प्रगट करने के लिए इस समय में लिखे गए काव्यशास्त्र के ग्रन्थों में निहित पूर्व आचार्यों के विचारों के अनुमोदन एवं परिवर्तन को प्रदर्शित कर अभिनव सिद्धांतों को भी दर्शाया है।

उन्होने इस परम्परा के आचार्य विश्वेश्वर पाण्डेय (१६९४-१७११) से ले कर आचार्य रहसविहारी द्विवेदी पर्यन्त के २१ आचार्यों एवं उनके काव्यशास्त्रों का विविरण किया है। इस परम्परा की एक कड़ी के स्वरूप में अभिराजराजेन्द्रमिश्र रचित 'अभिराजशोभूषण' ग्रन्थ समाविष्ट है। इस ग्रन्थ के प्रथम उन्मेष 'परिचयोन्मेष' की समीक्षा का इस प्रपत्र का उपक्रम है।

मम्मट रचित काव्यप्रकाश एवं आचार्य हेमचन्द्र द्वारा रचित काव्यनुशासन समान अभिराजराजेन्द्रमिश्र विरचित अभिनव काव्यशास्त्र 'अभिराजयशोभूषण' वृत्ति सहित ५३७ कारिका एवं पाँच उन्मेष में विभक्त ग्रन्थ है। समकालीन कवियों द्वारा रचित और स्वयं द्वारा रचित ग्रन्थों से उन्होने उदाहरण प्राप्त किए है। परिचयोन्मेष, शरीरतत्वोन्मेष, आत्मतत्वोन्मेष, निर्मितितत्वोन्मेष, प्रकीर्णतत्वोन्मेष ऐसे पाँच उन्मेष में काव्य से जुड़े विविध विषयों का आलेखन किया है। काव्यप्रशंसा, काव्यप्रयोजन, काव्यहेतु, काव्यविभाजन आदि विषयों का स्थापन नवीन सिद्धान्तों के आधार पर किया है।

'अभिराजयशोभूषण' के परिचयोन्मेष नामक प्रथम उन्मेष में राजेन्द्रमिश्रजी वाग्देवी सरस्वती की वंदना से मंगल करते हुए कहते है,

विदग्धवरटासना कवनशासना शारदा ।
भवेदमृतजीविनां मतिमतां यशोभूषणं॥

"जो विवेक रूपी हंस की पीठ पर आसीन है, काव्यानुशासन करने वाली वह शारदा रसामृत का पान करने वाले प्रतिभा-पटिष्ट कविजनों का यशोभूषण बने"।[4]

वाग्देवी प्रतिभा सम्पन्न कवियों का यशोभूषण बने ऐसी प्रार्थना से अभिराज ने कवि का यशोगान किया है। परम्परा अनुसार भरत, भामह, रुद्रट, दण्डी, आनन्दवर्धन तथा रेवाप्रसाद द्विवेदी आदि पूर्वसूरीयों की एवं टिकाकारों की वन्दना करते हुए कहते है, सभी आचार्यों के अभिप्रायों का संग्रह करते हुए अभिराजयशोभूषण नामक अभिनव एवं अर्वाचीनयुगोपीय काव्यशास्त्र का प्रणयन कर रहा हूँ।[5]

सर्व प्रथम आचार्य काव्यप्रशंसा से कवि की प्रशंसा करते है। काव्य को अमृत से भी अधिक कहा है। काव्य के गुणों से अनभिज्ञ श्रोताओं को काव्य वशीभूत करता है तो जो गुणज्ञ है ऐसे श्रोताओं का क्या कहना है? यह वाङ्मय चिरस्थायी एवं नित्य बनता है। प्रतिभा सम्पन्न

Shodh Sanchay
Shree Naroda Kelavani Mandal Sanchalit
SMT. A.P. PATEL ARTS & LATE SHREE N.P. PATEL COMMERCE COLLEGE
Shree Prahladbhai Kashidas Patel Vidhya Sankul, Naroda, Ahmedabad-382330.
Reaccredited by NAAC with B Grade Third Cycle | Accredited - by 'AAA'= ⭐⭐⭐⭐ 4 Star
Phone : 079-22816582, M.: 8866388134 E-mail : narodacollage1993@yahoo.com

कवि लोकोत्तर अभिव्यक्ति युक्त काव्य से समग्र महीतल को आकृष्ट कर बांध लेता है।[6] कवि का सामर्थय प्रस्तुत कर आचार्य मम्मट की तरह कवि की प्राशंसा कराते है।

अचिन्त्यचिन्तने शक्तोऽप्यदृष्टदर्शने क्षमः।
स्वहस्तामलकीयकृत्य ब्रह्माण्डं कविरीक्षते॥

अर्थात् " अचिन्त्य के चिंतन में समर्थ तथा अदृष्ट को द्रष्ट करेने वाला कवि समग्र ब्रह्माण्ड को हस्तामलकवत् देख लेते है।[7]

कवि के लिए प्रयुक्त 'स्वैर', 'आत्माराम', 'निरङ्कुश',[8] आदि विशेषण कवि मम्मट के 'अनन्यपरतंत्राम्'[9] के भाव प्रगट करते है। काव्य द्वारा धर्म, अर्थ और काम आदि पुरुषार्थ त्रय की प्राप्ति होती है। इनके साथ मोक्ष अपने आप काव्य से प्राप्त होता है।

राजेन्द्र मिश्र 'साहित्य' तथा 'वाङ्गमय' ऐसे पर्यायभूत शब्दों का अर्थ प्रगट करते हुए कहते है, शब्द और अर्थ से संपृक्त भाव साहित्य है। तथा इस शब्दार्थ युक्त वाणी का प्राचुर्य 'वाङमय' है। शब्दब्रह्माद्वैत समजाने के लिए उन्होने भर्तृहरि की कारिकाए प्रस्तुत कि है। वाल्मीकि, व्यास और कालिदास की तरह काव्यरूपी कीर्ति सदा अक्षुण्ण रहती है इस बात से काव्य की प्राशंसा समाप्त करते है। काव्य की प्राशंसा करके आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र कवि की श्रेष्ठता का ही प्रतिपादन करते है।

काव्य का प्रयोजन दर्शाते हुए आचार्य अभिराजराजेन्द्रमिश्र सर्वप्रथम नाट्याचार्य भरतमुनि से जगन्नाथ तथा अर्वाचीन काव्यशास्त्रीयों के विविध मतों की विस्तृत चर्चा प्रदर्शित करते है। आचार्य मम्मट द्वारा प्रतिपादित छ प्रयोजन अति प्रसिद्ध है। इन प्रयोजन के आसपास ही सभी आचार्य के लक्षण देखने मिले है।

राजेन्द्रमिश्र **अत्रोच्यते.....** कह कर अपना मत प्रदर्शित करते है। उनके अनुसार काव्य द्वारा अर्थप्राप्ति का प्रयोजन सभी कवियों का नहीं होता। पहेले भी सभी कवि राज्याश्रित नहीं होते थे। मात्र धनप्राप्ति में कवि स्वाभिमान नहीं दिखाता। उनको तो दिल्लीश्वर से धनप्राप्ति की कामाना रखने वाले पंडितराज जगन्नाथ भी गौरवहीन लक्षित होते है। आचार्य मानते है कि आत्माराम जीवन जीने वाले कवियों के जीवन में असंतोष कहाँ?

हेमचन्द्राचार्य ने भी अर्थप्राप्ति को प्रयोजन के स्वरूप में स्वीकार नहीं किया। उनका मानना है कि **धनमनैकान्तिकं** अर्थात् धन प्राप्ति दूसरे कारणों से भी हो शकती है। उन्होने काव्य के तीन प्रयोजनों का निर्देश किया है।

---

[6] अभिराजयशोभूषण - परिचयोन्मेष - १५

काव्यमानन्दाय यशसे कान्तातुल्यतयोपदेशाय च।[10]

काव्य आनन्द, यश और कान्ता के समान उपदेश के लिए होता है। वह आनंद को सर्व प्रयोजनों से श्रेष्ठ कहते है।

शिवेतर-क्षति को उन्होने स्थान एवं समयविशेष से सीमित माना है। स्तोत्र आदि कि रचना से कुछ कवियों के अमंगल का नाश होता है तो उसे संकीर्ण माना है। देखा जाए तो महाकाव्य, खण्डकाव्य, चम्पूकाव्य जैसे काव्य तो देवापराधनपरक नहीं होते। प्रहसन बण्ड- भण्ड प्रधान होता है। क्षेमेन्द्र द्वारा रचित कलाविलास में उस समय की दुष्प्रवृत्तियों का वर्णन है। इस लिए राजेन्द्रमिश्र कहते है कि, "**एवं हि सहस्रधारतामुपगते काव्यवर्ण्यविषये स्तोत्रमात्रसाध्या शिवेतरक्षति: कथं काव्यप्रयोजनीभवितुं शक्नोति**"? सहस्र काव्यधाराओं में मात्र स्तोत्र काव्य कैसे शिवेतरक्षति कर शकता है?

प्रयोजन की इस बात में राजेन्द्रमिश्र ने जैसे की हेमचन्द्राचार्य की मान्यता का ही विस्तार किया है। आचार्य हेमचन्द्र कहते है कि, **व्यवाहरकौशलं शास्त्रेभ्योऽप्यनर्थनिवारणं प्राकारन्तरेणापीति न काव्यप्रयोजनतयास्माभिरुक्तम्।** अर्थात् व्यवहार में कुशलता अन्य शास्त्र से तथा अनर्थनिवारण अन्य से भी संभव है। अत: इनको काव्यप्रयोजन के स्वरूप में हम नहीं कहते।

जिस प्रकार चन्द्र स्वयं अपनी चाँदनी का सुख प्राप्त नहीं कर शकता, दीपक खुद अपने प्रकाश से उपकृत नहीं होता उस तरह व्यवहार ज्ञान कवि को नहीं होता सिर्फ पाठक को ही होता है ऐसा उनका अनुशीलन है।

राजेन्द्रमिश्र सद्य: परनिर्वृति भी श्रोता अथवा पाठक की सहृदयता और अपेक्षा पर निर्भर मानते है। जो काव्य और उसके अर्थ को समजने में अशक्त है, पुष्ट संस्कार वाला नहीं है वह काव्य के आह्लाद की अनुभूति कैसे प्राप्त कर शकता है? विशेष रूप से व्यङ्गय काव्य। इस बात का समर्थन उन्होने धनददेव के एक श्लोक से किया है।

कवय: परितुष्यन्ति नेतरे कविसूक्तिभि:।
नह्यकूपारवत्कूपा वर्धन्ते विधुकान्तिभि:॥

अर्थात् "कवियों के सुभाषितों से कवि ही संतुष्ट हो शकते है, अन्य लोग नहीं। चन्द्रकिरणों के दर्शनमात्र से समुद्र की तरह कूएँ में उफान नहीं आता"।[11]

कवि अनेक ऐसे उदाहरण प्रस्तुत करते हुए आचार्य मम्मट की मात्र कान्तासम्मित उपदेश के प्रयोजन की बात का निरसन करते है। इसे मम्मट की अपेक्षाबुद्धि से कहा गया मानते है।

इस प्रकरण के अन्त में स्थापित करते है कि,

एवं हि, यश एवैकं स्थिरमनवद्यञ्च प्रयोजनं परिलक्ष्यते काव्यरचनाया:।[12]

परम्परा में आस्था रखते हुए राजेन्द्रमिश्र अपना अभिनव मत प्रदर्शित करते है।

न धनाय न पुण्याय व्यवहाराय नाऽपि वा ।
न च सद्य: सुखार्थाय काव्यं निर्मात्ययं कवि:॥

अर्थात् "कवि न धन के लिए, न पुण्यलाभ के लिए, न व्यवहार के लिए और न हि तत्कालिक आनंद की प्राप्ति के लिए काव्य का निर्माण करता है"।[13]

वस्तुतस्तस्य कर्मैतत् संस्कारोत्थं स्वभावजम्।
यदकृत्वा क्षणं यावन्नासौ समधिगच्छति॥

"वस्तुत: यह काव्य रचना उसके पूर्वजन्म के संस्कारों से प्रबुद्ध स्वाभाविक कर्म है। जिसे सम्पन्न न करके वह क्षणमात्र भी शान्ति की प्राप्ति नहीं कर शकता"।[14]

अभिराजराजेन्द्रमिश्र काव्य रचना को जन्मजन्मांतर से प्राप्त स्वाभाविक कर्म कहते है। जैसे भूख, प्यास, नींद आदि स्वाभाविक एवं नैसर्गिक है वैसे ही। इनका कोई प्रयोजन नहीं होता। अगर मानना है तो लोक और परलोक में अभिप्रेत एकमात्र 'यश' ही प्रयोजन है।[15]

अभिराजराजेन्द्रमिश्र ने प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी रचित अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्र में निर्दिष्ट काव्यप्रयोजन का खंडन किया है। राधावल्लभ कहते है।

मुक्तिस्तस्य प्रयोजनम्।[16]

सृष्टि के त्रैविध्य से आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक रूप से तीन प्रकार की मुक्ति ही काव्य का प्रयोजन है। आधिभौतिक से सभी सुखी हो, अन्न-पान, उचित भवन और वस्त्र आदि प्राप्त करे, सभी प्रसन्न और निष्कलुष रहे यह आधिदैविक मुक्ति और आत्मस्वरूप में अवस्थान आध्यात्मिक मुक्ति है। यह तीन प्रकार की मुक्ति को प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी साहित्य से प्राप्य मानते है। चेतना त्रैविध्य से वैयक्तिक, समाजिकी और ब्रह्माण्डीय यह तीन प्रकार की है। यह छे (६) प्रकार की मुक्ति परस्पर अनुषक्त मानी गई है।[17] और मुक्ति सभी की होती है।

इस ग्रन्थ के अनुवादक और व्याख्याकार रमाकान्त पाण्डेय भी इस अवधारणा से सम्मत नहीं है। वह इस अवधारणा को भारतीय दर्शन अथवा काव्यशास्त्र सम्मत नहीं मानते,

---

[12] वही - परिचयोन्मेष- पृष्ठ - २५

[13] अभिराजयशोभूषण - परिचयोन्मेष- पृष्ठ - २३

[14] वही - परिचयोन्मेष- पृष्ठ - २४

Shodh Sanchay
Shree Naroda Kelavani Mandal Sanchalit
SMT. A.P. PATEL ARTS & LATE SHREE N.P. PATEL COMMERCE COLLEGE
Shree Prahladbhai Kashidas Patel Vidhya Sankul, Naroda, Ahmedabad-382330.
Reaccredited by NAAC with B Grade Third Cycle | Accredited - by 'AAA'= ⭐⭐⭐⭐ 4 Star
Phone : 079-22816582, M.: 8866388134 E-mail : narodacollage1993@yahoo.com

अत: इस सिद्धान्त पर पुनर्विचार का सूचन करते है।[18]

राजेन्द्रमिश्र भी यश की चर्चा करते हुए राधावल्लभ त्रिपाठी की यश की अवधारणा का खण्डन करते हुए कहते है, यह लक्षण शास्त्र और लोक से विरुद्ध है। उनके मतानुसार काव्य से पुरुषार्थ त्रय (धर्म, अर्थ और काम) की प्राप्ति होती है। मोक्ष की नहीं। मोक्ष मृत्यु अनन्तर है। जीवन्मुक्त परमहंस ही होते है।

लौकिक और व्यावहारिक दृष्टि से ऐसी मुक्ति को काव्यप्रयोजन नहीं माना जाता।[19] परंतु राधावल्लभ त्रिपाठी का यह चिंतन साहित्य के संदर्भ में होने के कारण और परम्परा से हटकर कुछ नया विचार स्थापित करने के कारण अनन्त मर्यादा युक्त होने पर भी राजेन्द्रमिश्र को प्रभावित भी कर गया है।

प्रयोजन पश्चात काव्यहेतुओं का विचार प्रारम्भ करते है। भामह, दण्डी, वामन, मम्मट, रुद्रट, राजशेखर, महिमभट्ट, अभिनव भट्ट, भट्टतौत आदि आचार्यो के शक्ति, निपुणता और अभ्यास आदि हेतुओं का परीक्षण करते है। विस्तृत चर्चा के दौरान राजेन्द्रमिश्र अलौकिक और लौकिक हेतु का स्वीकार करते है। अलौकिक हेतु को दैवायत्त कहते है, इस हेतु को ही शक्ति, प्रतिभा अथवा प्रज्ञा के स्वरूप में मानते है।

अन्य प्रतिभा लौकिक है। व्युत्पत्ति एवं अभ्यास के युग्म जो प्रतिभा के संस्कार है। परस्पर समन्वित यह प्रयत्न साध्य है। प्रतिभा के अभाव में काव्य प्रसृत नहीं होता। अगर होता है तो उपहास के पात्र हो जाता है। प्रतिभा ही कवित्व का बीज है। प्रतिभा बुद्धि, स्मृति तथा मति से विलक्षण त्रैकालिक शक्ति है। समग्र ब्रह्माण्ड का हस्तामलक वत प्रत्यक्ष दर्शन कराने वाली है।[20]

आचार्य हेमचन्द्र ने मात्र प्रतिभा को ही काव्य का कारण कहा है। लक्षण है,

प्रतिभास्य हेतु:।[21] प्रतिभा काव्य का हेतु है।

प्रतिभा की व्याख्या करते है। **"प्रतिभा नवनवोल्लेखशालिनी प्रज्ञा। अस्य काव्यस्येदं प्रधान कारणम्। सा च सहजौपाधिकी चेति द्विधा।** सहजा आवरण का क्षय करती है और मंत्र से उत्पन्न प्रतिभा को औपाधिकी प्रतिभा कहते है। व्युत्पत्ति और अभ्यास को प्रतिभा के संस्कार कहे है।

राजेन्द्र मिश्र प्रकरण की समाप्ति पर कहते है, **तदलमधिकप्रतननेन। प्रतिभाया देवकृपोपनतत्वं सिद्धमेव ।**[22] **अधिक विस्तार नहीं ।** प्रतिभा का देवप्रदत्त होना सिद्ध है।

---

[18] वही - पृष्ठ-४५,४६

[19] अभिराजयशोभूषण - परिचयोन्मेष- पृष्ठ-३०

राधावल्लभ त्रिपाठी, **जागरिता प्रतिभा तस्य कारणम्**[23] ऐसा लक्षण **प्रदान करते है।** जागरिता अर्थात् स्पन्दनशीलता। स्पन्दनशीलता कवि प्रतिभा का स्वभाव माना है। उन्होने प्रतिभा को तीन भागों में विभक्त किया है। सुकुमार, विचित्र और उभयात्मक। काव्य रचना के अनुकूल शब्दार्थ की उपस्थिति को प्रतिभा का जागरण माना है। यह जागरण गुरूपदेश, लोक, शास्त्र, संगीत और काव्य आदि के अवेक्षण से आते है। तथा काव्य का अभ्यास काव्यगोष्ठी, सहृदयों की संगति, प्रसंगविशेष तथा घटनाविशेष से आते है। अन्ततः प्रतिभा में ही उन्होने निपुणता और अभ्यास को अंतर्हित किया है।

प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी हेमचन्द्राचार्य की विचारधारा के परिलक्षित होते है। काव्य कारण के पश्चात काव्य लक्षण का निरूपण करते है।

प्रायः सभी कव्यशास्त्रीयों ने काव्य का लक्षण शब्द और अर्थ के सायुज्य से निर्मित किया है। भामह ने कहा, **शब्दार्थौ सहितौ काव्यम् ।**[24] इस लक्षण में उतरोत्तर परिवर्तन और परिवर्धन हुए। आचार्य मम्मट के लक्षण के आस-पास अधिकांश लक्षण रचे गए। आचार्य हेमचन्द्र का लक्षण इस परम्परा अनुसार है, **अदोषौ सगुणौ सालङ्कारौ च शब्दार्थौ काव्यम्।**[25]

अभिराजराजेन्द्रमिश्र स्वोपज्ञ लक्षण प्रस्तुत करते है।

काव्यं लोकोत्तराख्यानं रसगर्भं स्वभावजम् ।
परन्नेह च निर्व्याजं यशोऽवाप्तिप्रयोजनम्॥

"लोकोत्तर आख्यान ही काव्य है। जो रसगर्भ हो। स्वभावज हो। इहलोक और परलोक में सहज यशप्राप्ति रूपी प्रयोजन वाला हो।[26]

शब्दार्थसङ्गमेनैव किञ्चिदाख्यातुममिष्यते।
ततश्चोभयसाहित्यं काव्यपर्यायगोचरम्॥

"शब्द और अर्थ की समष्टि से ही कुछ कहा जा सकता है। इसलिए शब्द और अर्थ के साहचर्य ही काव्य का पर्याय है"।[27]

आचार्य लोकोत्तर, रसगर्भ और स्वभावज आख्यान को काव्य कहते है। आख्यान अर्थात् वर्णन अथवा अभिव्यक्ति। यह अभिव्यक्ति शब्द और अर्थ के सायुज्य से ही शक्य मानी है। मन, वाणी एवं कर्म से लोकोत्तर किसे कहते है? इसका उत्तर है। सगुणत्व, अदोषत्व तथा अलंकार और नवोन्मेषा प्रज्ञा आदि कारणों से युक्त है वह लोकोत्तरता है।

सगुण, अदोषौ तथा अलङ्कार का सायुज्य आदि लक्षण आचार्य मम्मट से मिलते है।

---

[23] अभिनवकाव्यालङ्कारसूत्रम् - १/3

[24] काव्यालङ्कार - १/१६

रसगर्भ यह लक्षण आचार्य विश्वनाथ के समान है।राजेन्द्रमिश्र के लक्षण में भिन्न है **'स्वभावज'**। वह कहते है। **काव्यं तावत्स्वत: स्फूर्तं भावोच्छलनं किमपि।** स्वत:स्फूर्त कोई भावोच्छलन काव्य है। किसी भी पूर्वाग्रहों से विमुक्त काव्य आयासपूर्वक नहीं लिखा जाता। स्वत:Sस्फूर्त एवं लोकोत्तर होने के कारण ही वह स्वभावजन्य है।

उन्होने अन्य नवयुगीन आचार्यों के काव्यलक्षण पर भी विचार किया है। जिसमें प्रो.रेवाप्रसाद द्विवेदी (काव्यालङ्कारकारिका), डॉ. ब्रह्मानन्दशर्मा (काव्यसत्यालोक), शिवजीउपाध्याय (साहित्यसंदर्भ), प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी (अभिनवकाव्यालङकारसूत्र), रहसविहारीद्विवेदी (नव्यकाव्यतत्वमीमांसा) आदि का समावेश किया है।

प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी के काव्यलक्षण की समीक्षा करते है। प्रो. राधावल्लभ अनुसार **लोकानुकीर्तनं काव्यम्।** लोक का अनुकीर्तन काव्य है।[28] **लोक** का अर्थ **लोकृ** धातु से लोकयति**,** भासते, लोकते, पश्यति वा । जो भासित होता है, जो देखता है, सब लोक है। लोक के विविध अर्थ प्रदर्शित करते है। कवि द्वारा दिव्य-आर्ष चक्षु से अथवा चर्मचक्षु से जो देखा जाता है उसे भी लोक कहते है। आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक ऐसे तीन प्रकार के लोक का वर्णन करते हुए कहते है कि यह अधिभूत से उत्पन्न होने वाला आधिभौतिक लोक ही काव्यकला का आधार है। आधिभौतिक लोक के बिना मनुष्यों के कार्यव्यापारों का प्रवर्तन नहीं होता। आधिदैविक मानससाक्षात्कार से उत्पन्न होता है। वस्तुमात्र का प्रतीयमान स्वरूप उसकी आत्मा है और उस आत्मा में जो भी होता है वह अध्यात्म कहा है।

कवि जिसे रोज देखता है, महसूस करते है उस लोक के अनुभवों को अनूदित करते है काव्य के स्वरूप में । कवि ने लोक के सभी तत्वों को काव्य कोटी में ला दिया है। इन तत्वों का कवि काव्यरचना की प्रक्रिया के क्षण में अपने प्रतिभाचक्षुऑ से साक्षात्कार करते है। उससे तन्मयीभावना स्थापित कर उसे काव्य के स्वरूप में अभिव्यक्त करते है।

इस प्रकार राजेन्द्रमिश्र अपने और अन्य काव्यशास्त्रीयों के काव्य लक्षण की विशद चर्चा कर अब काव्य के विभाजन का विस्तरण करते है।

काव्य का वर्गीकरण मुख्य रूप से भाषा, बन्ध, लेखनशैली और काव्यानन्द प्राप्ति के माध्यम तथा काव्यार्थ के आधार पर किया है। राजेन्द्र मिश्र ने सभी काव्यप्रकारों को प्रस्तुत किया है। उन्होने व्यञ्जना आधारित काव्य प्रकारों की समीक्षा कि है। उनके मतानुसार काव्य पाठकनिमित्तक होता है। इसलिए काव्य का वर्गिकरण भी पाठक की दृष्टि से ही होता है। व्यङ्ग्यार्थ काव्य को उत्तम काव्य माना है उस मत का राजेन्द्र मिश्र समर्थन नहीं करते। वह कहते है कि सभी पाठक कि अभिरुचि समान नहीं होती परन्तु परितुष्टि एक सी ही होती है। सब की समान तृषा अलग-अलग ढंग से बुझती है। आनन्द का स्रोत काव्य तो एक ही होता है।

राजेन्द्र मिश्र पाठक तीन प्रकार के मानते है। १) सहृदय पाठक, २) कोविद (पण्डित) पाठक ३) लोक (सामान्य) पाठक।

इन पाठकों के आधार पर वह काव्य के भी तीन भेद दर्शाते है।

काव्यं सहृदयास्वद्यं कोविदासवाद्यमेव च।
लोकास्वाद्यमिति ख्यातं त्रिविधं रोचते च॥

"काव्य सहृदयास्वाद्य, कोविदास्वाद्य और लोकास्वाद्य इन तीन रूपों में मुझे पसंद है"।[29]

इस विभाजन से उनका तात्पर्य उत्तम अथवा अधम की स्थापना करना नहीं है।

सृष्टिस्सारस्वती पूता प्रोच्यते यदि वाऽधमा ।
मध्यमा चेति तन्मन्ये वाङ्गमयं गौरवं हतम्॥

वह कहते है कि, यदि सारस्वती सृष्टि को मध्यम अथवा अधम कहना उसका गौरव हनन करना है।[30] फिर तो पामरों का वार्तालाप कह शकते है काव्य नहीं। **काव्यीभवेद वच: प्रसरणमुत्तमेव जायते।** काव्यत्व की गरिमा से मण्डित कोई भी शब्दप्रसार 'उत्तम' बन जाता है।

वह मानते है कोविद भी सहृदय वाचक हो शकता है। पण्डित होते हुए भी जीनमे सहृदयता सर्वोपरि है उन वाचक के द्वारा जिसका आस्वादन होता है वह **'सहृदयकाव्य'** है। अगर उसे कोई उत्तम कोटी का माने तो उसमें उन्हे आपत्ति नहीं है।

सहृदयता की अपेक्षा जो पाण्डित्यता प्रधान वाचकों द्वारा जो आस्वाद्य है वह **'कोविदकाव्य'** है। और जो सहृदय और कोविद नहीं वह सामान्य व्यक्ति द्वारा आस्वाद्य **'लोकास्वाद्यकाव्य'** है।

अपना स्पष्ट अभिप्राय प्रस्तुत करते है कि, लोक मे सहृदय और कोविद कि संख्या अल्प होने के कारण लोकास्वाद्य की ही प्रतिष्ठा है।

लोकं रञ्जयति प्राज्यं सा कविता मता मम॥

लोक का यथेष्ट दृष्टि से अनुरञ्जन करती है वही कविता मेरे मत से 'कविता' है।[31]

शारदासत्कृपावाप्ता नवाऽभिप्रायमेदुरा।
अक्लिष्टपदबन्धाऽढ्या लोकसंस्पर्शचिन्मयी॥
लोकास्वाद्याऽपि कविता संवेदन मनोरमा।
गाहते हृदयं गाढं पाठकानामनुत्तमा॥

भगवती सरस्वती की कृपा से प्राप्त, नूतन अभिप्रायों से ओत-प्रोत सरल पदबन्धो से भरी, लोकवृत्तों के संस्पर्श से युक्त।[32]

---

[29] अभिराजयशोभूषणम् - परिचयोन्मेष - ३८

मनोरम संवेदना वाली, उच्चकोटि की लोकस्वाद्य कविता भी पाठकों के हृदय में गहराई में उतार जाती है।[33]

राजेन्द्र मिश्र ने लोक अर्थात् सामान्य मनुष्य भी जिसका आस्वाद कर शके ऐसे सरल काव्यों को उसी कोटि में रखा है जहाँ उन्होने सहृदय और कोविद काव्य को रखा है।

इस प्रकार भरत से ले कर जगन्नाथ तक तथा उनके बाद के अर्थात् पण्डितयुगोत्तर काल के कुछ अभिनव काव्यशास्त्रियों के विभिन्न नूतन सिद्धान्तों की स्थापन करते हुए अथवा खंडन कर असहमति प्रदर्शित करते हुए काव्यप्रशंसा, काव्यप्रयोजन, काव्यहेतु, काव्यलक्षण एवं काव्यभेदों की व्याख्या अपने अभिनव सिद्धन्तो का आलेखन अभिराजयशोभूषणनामक ग्रन्थ के इस 'परिचयोन्मेष' में विस्तार से किया है। समय के अनुकूल रह कर गतानुगतिक परम्परा से जुड़कर और उनसे हटकर भी सोचकर सही अर्थ में यशोभूषण सिद्ध हुए है।

....

संदर्भग्रन्थ सूची

१) मिश्र, अभिराज राजेन्द्र. (२००६). *अभिराजयशोभूषण.* वैजयन्त प्रकाशन, इलाहाबाद

२) मिश्र अभिराज राजेन्द्र। (२०१०). *संस्कृत का अर्वाचीन समीक्षात्मक काव्यशस्त्र.* विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी.

३) त्रिपाठी, राधावल्लभ. (२००९). *अभिनवकाव्यालङ्करसूत्रम्.* जगदीश संस्कृत पुस्तकालय, जयपुर.

४) त्रिपाठी, राधावल्लभ. (२००४). *संस्कृत काव्यशास्त्र और काव्य परम्परा.* प्रतिभा प्रकाशन, दिल्ली.

५) नान्दी, तपस्वी.(संपा.) (२०००). *काव्यानुशासनम्.* लालभाई दलपतभाई भारतीय संस्कृति विद्यामन्दिर, अहमदाबाद.

६) બેટાઈ રમેશ. કંસારા, નારાયણ. *ભારતીય સાહિત્ય વિચાર મંજૂષા.* યુનિવર્સિટી ગ્રન્થનિર્માણ બોર્ડ, ગુજરાત રાજ્ય, અમદાવાદ.

.....